सुनीता, पीएच.डी. (शोधार्थी)
हिन्दी विभाग,
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र
शोध निर्देशक–डॉ. सुभाष चन्द्र

''त्रासदी'' उपन्यास में नारी संघर्ष

स्त्री और पुरुष समाज रूपी सिक्के के दो पहलू हैं । एक दूसरे के विपरीत होते हुए भी एक दूसरे के बिना अधूरे । दोनों की ही सत्ता एक दूसरे पर निर्भर करती है । परन्तु यह अटल सत्य होते हुए भी पुरुष वर्ग अपने आप को स्त्री से अधिक सामर्थ्यवान मानता है । उसकी इसी सोच तथा स्त्री के संयमी स्वभाव के कारण उसे समाज में उच्च तथा स्त्री को निम्न स्थान प्राप्त हुआ और इसी आधार पर समाज में पुरुष प्रधानता विकसित होती चली गई । इसी पुरुष प्रधानता के कारण समाज में स्त्रियों की स्थिति बद से बदत्तर हो गई । इस बारे में डॉ. शगुफ्ता नियाज़ लिखती है–''स्त्रियों पर संस्कृति, नैतिकता, परम्परा और मर्यादा के संरक्षण के नाम पर सदियों से दमन और उत्पीडन का क्रम जारी है ।''[1]

संतों का भी नारी विषयक दृष्टिकोण अधिकांश निन्दापरक ही रहा है । संतों ने नारी को माया का प्रतिरूप और हरि–स्मरण में बाधक माना है । इस विषय में तुलसीदास ने कहा है–

''ढोल, गवार, पशु, शूद्र, नारी ।
ये सब है ताड़न के अधिकारी ।''[2]

परन्तु अब वक्त आ गया है इस शोषण, उत्पीडन और दमन चक्र के खिलाफ आवाज उठाने का । मजबूरी संघर्ष को जन्म देती है यह सत्य है । प्रतिकूल परिस्थितियां व्यक्ति को मजबूर करती है परन्तु थोड़ा सा साहस मजबूरी के खिलाफ संघर्ष का आगाज़ बन सकता है । कुछ ऐसी परिस्थितियां है अभय मौर्य द्वारा लिखित ''त्रासदी'' उपन्यास के नारी पात्रों की । ये शोषण के खिलाफ सजग और संघर्षरत हैं । ये अपने अधिकारों के साथ–साथ अपने कर्त्तव्यों के प्रति भी जागरूक हैं । शहरी और ग्रामीण दोनों ही नारी पात्र अपने ऊपर हो रहे जुल्म और शोषण का मुँहतोड़ जवाब देने को तत्पर रहती है । नारी पात्रों के इन क्रान्तिवीर तेवरों से यह उजागर होता है कि अब वे अपनी शक्ति को पहचानने लगी हैं । अब उन्हें किसी प्रकार की रूढ़ियाँ, ढकोसलो और सामाजिक परम्पराएँ नाम की बेडीयाँ कतई मंजूर नहीं । अब वह जुल्म और अन्याय के सामने घुटने नहीं टेकती । वह जीना चाहती है हक और आत्म सम्मान के साथ । इसी संघर्ष और जागृति का परिणाम है कि जब गॉव के सरपंच द्वारा दलीप, धीरज और जावेद को सिर्फ इसलिए बेरहमी से पीटा जाता है क्योंकि धीरज दलित जाति के लड़कों के साथ घनिष्ठ मित्रता रखता है जो सवर्ण जाति के लोगों को मंजूर नहीं । जब इस मुद्दे पर पंचायती कार्यवाही होती है तो पहली बार उसमें औरतें हिस्सा लेती है– ''ऐसा पहली बार हुआ कि सवर्ण औरतें पंचायत में आकर डट गई हों, सारी कार्यवाही में हिस्सा लेने को उतारू हों । गाँव के पंचैतियों ने बादामी और दूसरी औरतों की तरफ सख्ती से देखा, गुस्से से उन्हें घूरा, पर औरतें टस से मस न हुई, वे अपने स्थान पर जमीं रही।''[3]

पुरुषों की तरह अब नारी पात्र भी स्वतन्त्रता का महत्त्व समझने लगी है । वे जातिय भेद को नकारने लगी है और सामाजिक एकता की पक्षधर हुई हैं । वे अब अपना अधिकार मांगने में नहीं बल्कि छीनने में विश्वास रखती है । अब वे अत्याचार के आगे सिर नहीं झुकाती बल्कि उसका सामना करती हैं। देश विभाजन के समय धीरज का परिवार जब एक मुस्लिम परिवार की जान बचाता है तो सारा गाँव उनके खिलाफ हो जाता है और समय-समय पर इसके लिए उन्हें प्रताडित किया जाता है । लेकिन जब पंचायत के दौरान फिर वही बातें उठती है तो बादामी इसका भरी पंचायत में खडतल जवाब देती है-''यू कौणसा गंरथ सै, जौणसा हिन्दूआँ तै नफरत करण की सीख देवै सै? जरूर बाह्मणाँ अर किरयाड.ा (बनियाँ) नै बहोत तोड्या-मरोड़या होगा । इनका यों ही धंधा सै- लोग्गों नै आपस में लड़ाओ अर राज करो। हाम नई मानदे ईस्सी खराब रीतां नै ।''[4]

अब वे जातिय सत्ता को पूर्णतया अस्वीकार करती है, मानव का बंटवारा जातिय आधार पर कतई नहीं स्वीकारना चाहती । बादामी एक दबंग ग्रामीण महिला है जो पंचायती कार्यवाही में भी शामिल होती है, शोषण और जुल्म के खिलाफ आवाज उठाती है। बेटे धीरज द्वारा प्रोत्साहित करने पर पढ़ना सीखती है जिससे उसकी सोच का दायरा विकसित होता है और वह जीवन में अहम् निर्णय लेती है । वह ग्रामीण समस्याओं के विषय में सरपंच कमला, धीरज व अन्य लोगों से विचार-विमर्ष करती है और महत्त्वपूर्ण निर्णयों में भागीदारी निभाती है । वह धीरज के बाल-विवाह की समस्या को भी बड़ी समझदारी और निडरता से सुलझाती है । जब उस पर इस बाल-विवाह को

अमली जामा पहनाने के लिए दबाव डाला जाता है तो वह भरी पंचायत में दबंगाई से कह देती है कि–''थ्हारा जो जी में आवै, सौ करो, जद तक म्हारा छोहरा त्यार नई ओहवैगा, हाम कुछ नई करॉंगे । एक बैत ओहर सूण ल्यो । यू जातकॉं का ब्याह सै, गैर–कनूनी सै, थ्हाम घणी धौंस ना द्यो पचैत भी कुछ ना कर सकैगी ।''[5]

कमला एक अन्य ग्रामीण नारी पात्र है जो कि गांव के संरपच की पुत्रवधु है और उसका पति नपुंसक है । उसका ससुर इस बात को भांप जाता है । कमला यह बात किसी को नहीं बताती, परन्तु उसके पति की इस कमी के कारण जब उसे तरह–तरह के ताने सुनाए जाते हैं तो वह इसे सहन नहीं करती । जब उसकी सास अपने बेटे की तरफदारी करती है तो वह उसे अच्छी तरह झाड देती है– ''अचार घैल ले (डाल ले) तेरे काच्चे छोहरे का! मन्नै नई चहिए ईसा डळा (ढेला)! ओह कोई मर्द सै! हिजड.ा सै, निरा हिजड.ा!''[6]

वह अन्य की गलती की सजा स्वयं स्वीकार नहीं करती । एक दिन कमला का ससुर उसे लाचार, निर्बल, असहाय मजबूर जानकर उसको अपनी हवस का शिकार बनाना चाहता है जिसे वह अपनी झूठी मान–मर्यादा की चद्दर से ढकने की कोशिश भी करता है परन्तु कमला को यह कतई मंजूर नहीं । वह इसका पूर्ण बहिष्कार करती है– ''उसने एक ही झटके में बीरसिंह से अपना हाथ छुडाया और चीते की तरह कूदकर एक तरफ हटते हुए कहा– छोड बेशर्म बुड्ढे! कुछ तो आपणी उम्र, आपणे धौले (सफेद) बालों का

ख्याल कर! बेहयाओं का बाड.ा सै यू घर तो! चल दूर हट! नई तो मैं रूक्का मैरकै (आवाज देकर) लोगों नै कट्ठा कर ल्यूँगी ।''[7]

इसी प्रकार रत्नकुमार सांभरिया की कहानियों के नारी पात्र भी संघर्षशील और शोषण विरोधी प्रवृत्ति रखते हैं । 'आखेट' कहानी की पात्र रेवती जो कि एक दलित महिला है, अपने ऊपर हो रहे अत्याचार का पुरजोर विरोध करती है । एक दिन रेवती और उसकी सास जमीनदार नानकसिंह के खेत में घास छील रही थी । रेवती की सुन्दरता और यौवन देखकर लम्पट नानक सिंह की रग-रग में वासना फूट पड़ी । उसने रेवती की सास से कहा- ''भाभी सामने जानवर चर रहे हैं, उनको दूर भगा आ । पहचानना किन-किन के हैं । घर बुलवाकर डपटूंगा ।''[8] वे जानवर उसी की गाय-भैंसें थी । वह सिर्फ उसको रेवती से दूर भेजना चाहता था। रेवती को अकेली देखकर वह उस पर टूट पड़ा । रेवती छटपटाई, चहचहाई, अपने आपको छुडाने की पूरी कोशिश की फिर-''रेवती ने आव देखा ना ताव, जिस खुरपी से वह घास छील रही थी, उसी को नानक सिंह के नाक में भौंक दिया । खुरपी लगते ही उसकी नाक का अग्रभाग निबोरी की तरह लटक आया था । शरीर लहूलुहान । कपडे रंग बदल गये थे ।''[9]

कमला क्रान्तिकारी व सुधारवादी विचारों वाली महिला है । वह उन लोगों से सख्त नफरत करती है जो जातिवाद और धार्मिक आधारों पर लोगों को बुद्दू बनाते हैं । वह अपने ऊपर ही नहीं, दूसरों पर भी हो रहे अत्याचारों को सहन नहीं करती, अन्याय के आगे कभी नहीं झुकती । वह इनके खिलाफ संघर्ष करती है । उसे ग्रामीण-सामाजिक समस्याओं की अच्छी

समझ है और इन्हीं विकासोन्मुख विचारों के कारण एक दिन वह गाँव की सरपंच बनती है और गाँव के विकास में अच्छी भागीदारी निभाती है ।

हमारे समाज में स्त्रियों की स्थिति अच्छी नहीं है और यदि विधवा स्त्रियों की बात करें तो उनकी स्थिति रोंगटे खडे करने वाली है । पुरुष वर्ग उनकी मजबूरियों का फायदा उठाना चाहता है । उसे लावारिस वस्तु समझकर उससे खेलना चाहता है । ''जिस प्रकार पृथ्वी पर पड़े हुए मांस के टुकड़े पर पक्षीगण टूट पड़ते हैं, उसी प्रकार पतिहीन स्त्री पर पुरुष टूट पड़ते हैं ।''[10] विधवा स्त्रियाँ असहाय, लाचार, निर्बल सबकुछ सहने को मजबूर है, बेबस हैं । इस बारे में राकेश कुमार लिखते है–''स्त्री शोषण की शुरूआत सर्वप्रथम उसके परिवार से होती है । प्रथम शोषण कर्त्ता कोई न कोई उसका अपना ही होता है । भारतीय परिवारों की संरचना उत्पीडनकारी और दमनकारी एवं पितृक है ।''[11] सुनहरी एक बाल विधवा स्त्री है । उसके भविष्य की चिंता और समाज में स्त्रियों की बुरी स्थिति को देखते हुए उसके पिता अपनी जमीन का कुछ हिस्सा सुनहरी के नाम कर देते हैं । पिता की मृत्यु के बाद जब भाइयों को इस बात का पता चलता है तो वे जमीन के कागज पर अंगूठा लगवाने के लिए सुनहरी को मजबूर करते है तो सुनहरी कहती है–''ना भाई गुंट्ठा मैं कोन्या लाऊँ । बाप की इच्छा का मान रखणा सै ।''[12] भाईयों ने उस पर दरिन्दों की तरह कहर ढाया, खून के प्यासे हो गए । उसे अत्याधिक प्रताडित किया, पूरे गाँव के सामने मारते–पीटते हैं, घसीटते हैं, गालियाँ देते हैं । लगभग सारा गाँव मूक दर्शक बनकर देखता रहता है, उसके बचाव में कोई आगे नहीं आता, क्योंकि गाँव वाले उसे ही दोषी मानते हैं।

''परिवार के नियम, कानून, मान्यताएं स्त्री को अनुकूलित करती है । पितृक सत्ता का एकमात्र लक्ष्य है स्त्रियों को पारिवारिक मूल्यों के नाम पर उत्पीडन के शिकंजों में जकड़ना।''[13] यह बात सुनहरी के मामले में बिल्कुल सही साबित होती है । परन्तु अब वक्त आ गया है इस दमनचक्र को खत्म करने का । अब स्त्रियाँ किसी भी प्रकार का पारिवारिक या सामाजिक शोषण को सहन नहीं करती, उसके खिलाफ संघर्ष करती है । इसी प्रकार सुनहरी भी अपने भाईयों के द्वारा इतना जुल्म सहन करने के बाद भी हार नहीं मानती, वह अत्याचार का सामना करती है और अपना हक लुटने से बचाती है । सुनहरी इस सामाजिक और पारिवारिक उत्पीडन एवं अन्याय के खिलाफ संघर्ष करती है और इसी संघर्ष के कारण ही सुनहरी अपने लिए अच्छा जीवन तय कर पाती है ।

राधा और दिलीप आपस में प्रेम करते है राधा सवर्ण जाति से सम्बन्ध रखती है । वहीं दिलीप दलीत परिवार का लड़का है। दोनों विवाह करना चाहते है परन्तु तात्कालिन समाज में अन्तर्जातिय विवाह तो बहुत दूर की बात थी अन्तर्जातिय दोस्ती भी तथाकथित समाज को मंजूर नहीं थी । जातिवाद का खूब बोलबाला था और ऊपर से खाप पंचायतों का कहर । समाज रूपी शरीर की नस–नस में जाति रूपी खून भरा था । इस विषय पर राधा और दिलीप अपने दोस्तों से विचार–विमर्श कर रहे होते है तो राधा एक लम्बी सांस लेते हुए कहती है– ''यदि कुछ अच्छे साथी मिल जाएँ, तो उनके साथ मिलकर आवाज उठाने की शायद हिम्मत कर पाऊँ । मेरे या किसी अकेले व्यक्ति के बस की बात नहीं यह । आपको तो पता ही होगा, खाप पंचायतों का

आतंक? बड़ी दरिन्दगी है हमारे समाज में, विशेषकर मेरी जाति के लोगों में । अपने आप को ब्राह्माणों से भी ऊँचा समझते हैं । आर्थिक शक्ति, यानि जमीन है ना उनके पास जो ब्राह्माणों के पास भी नहीं । इसलिए मनमर्जी करते हैं । उनकी बात ना मानने वालों का हुक्का–पानी बंद करते हैं, गाँव निकाला देते हैं, जाति से बाहर वास्ता रखने वाले लड़के या लड़की को जिन्दा जला देते हैं, जमीन में गाड़ देते है, गला घोटकर मार देते है.... और न जाने क्या–क्या जुल्म करते हैं तथाकथित जाति की इज्जत के नाम पर, झूठी शान के नाम पर।''[14] राधा और दलीप सुखमय भावी गृहस्थ जीवन के लिए संघर्ष करते हैं । इस विषय पर प्रथम कदम राधा को उठाना था। वह आत्मविश्वासी, पढ़ी लिखी और समझदार लड़की है । उसका दृढ़संकल्प है कि वह अपने भविष्य का फैसला स्वयं लेगी, दूसरी के हाथों की कठपुतली नहीं बनेगी । समाज की दकियानूसी रूढ़ीयों और बेडीयों को नहीं मानेगी । उनका संघर्ष कामयाब होता है । आगे चलकर दिलीप एक आई.ए.एस. अधिकारी बन जाता है । उसके रूतबे के आगे उसकी जाति का महत्त्व क्षीण हो जाता है और पारिवारिक रजामंदी से उनका विवाह हो जाता है । इनका विवाह सुधारवादी विवाह कहलाता है । आगे चलकर इसी तर्ज पर जावेद और जयति, धीरज और समता भी सुधारवादी विवाह करते हैं । ये सभी अन्तर्धार्मिक विवाह के प्रबल समर्थक है । इन्हें भी इस रास्ते पर चलते हुए अनेक समस्याओं से संघर्ष करना पड़ा और इन्हीं संघर्षो के कारण वे अपनी मंजिल तक पहुँचे ।

निष्कर्षतः अभय मौर्य के उपन्यास ''त्रासदी'' में नारी की अस्मिता के साथ–साथ नारी मन की चुनौतियों को प्रस्तुत किया गया है । समाज में व्याप्त कुरीतियों, रूढ़ीयों और विकृतियों से टकराकर नारी जीवन की सार्थकता को प्रस्तुत किया है । सामाजिक मान्यताओं के विरूद्ध, पति की नपुंसकता, ससुर का हवशीपन, भाईयों के अत्याचार, पारिवारिक व सामाजिक शोषण के विरूद्ध अब नारी कृतसंकल्प है, अपनी अस्मिता और आत्मसम्मान की लड़ाई लड़ने के लिए । यही नारी चेतना और संघर्ष का आधार है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. डॉ. शगुफ्ता नियाज़, नारी विमर्श: दशा और दिशा, पृ.सं. 113
2. तुलसीदास, रामचरित् मानस, सुन्दरकाण्ड, दोहा 58 (चौपाई 6)
3. अभय मौर्ये, त्रासदी, पृ.सं. 17
4. अभय मौर्ये, त्रासदी, पृ.सं. 21
5. अभय मौर्ये, त्रासदी, पृ.सं. 138
6. अभय मौर्ये, त्रासदी, पृ.सं. 53
7. अभय मौर्ये, त्रासदी, पृ.सं. 54
8. रत्नकुमार सांभरिया, दलित समाज की कहानियाँ, पृ.सं. 44
9. रत्नकुमार सांभरिया, दलित समाज की कहानियाँ, पृ.सं. 45
10. डॉ. सेवा सिंह ब्राह्मणवाद और जनविमर्श, पृ.सं. 31
11. राकेश कुमार, नारीवादी विमर्श, पृ.सं. 11
12. अभय मौर्ये, त्रासदी, पृ.सं. 90
13. राकेश कुमार, नारीवादी विमर्श, पृ.सं. 11
14. अभय मौर्ये, त्रासदी, पृ.सं. 117-118